स्कूल पुस्तकालयों की सक्रियता के सवाल

कमलेश जोशी

पुस्तकालयों का दीर्घकालिक काम पढ़ने की संस्कृति विकसित करना है। यह लेख इसी लक्ष्य के लिए शिक्षकों को विभिन्न तरह की पाठ्य सामग्री से परिचित कराने और पढ़ने का रुझान बनाने के लिए व्हाट्सएप समूह के ज़रिए किए गए एक प्रयास की कहानी बताता है। समूह में शिक्षकों को विविध तरह की सामग्री पढ़ने के लिए भेजी गई। इस सामग्री में कहानी-कविताओं के अलावा, शिक्षा व विषय के नज़रिए, कक्षा के अनुभव, विविध तरह का बाल साहित्य और आसपास के पर्यावरण से जुड़ी सामग्री भी शामिल की गई। इस सामग्री पर बातचीत के लिए मौक़े मुहैया कराए गए। लेख बताता है कि इस प्रक्रिया ने न सिर्फ़ शिक्षकों के लिए चिन्तन-मनन के दरवाज़े खोले, बल्कि पढ़ने-पढ़ाने में रुचि को भी विकसित किया। -सं.

देश की स्वतंत्रता के बाद 1952 में गठित मुदलियार आयोग से लेकर इस वर्ष जारी स्कूली शिक्षा की *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* में, स्कूल पुस्तकालय के महत्त्व को रेखांकित किया गया है। स्कूल पुस्तकालय को लेकर शिक्षा व्यवस्था में छिटपुट प्रयास भी होते रहे हैं। स्कूलों में पुस्तकालय मद में कुछ पैसा आता है या किताबें उपलब्ध करवाई जाती हैं। लेकिन, इनकी अभी बच्चों तक पहुँच कितनी है; किताबों का लेन-देन किस तरह का है; किताबों की गुणवत्ता कैसी है; आदि सवाल अभी भी प्रासंगिक हैं। इसपर सोच-विचार के बाद कहा जा सकता है कि स्कूलों में पुस्तकालय की प्रभावकारिता अभी भी हाशिए पर ही है। इसकी शिक्षा व्यवस्था में केन्द्रीय जगह नहीं बन पाई है। इसके बहुत-से कारण हो सकते हैं। इन कारणों में स्कूलों में स्टाफ़ की कमी, पुस्तकालय के प्रति नज़रिया, शिक्षा व्यवस्था में सीखने-सिखाने का माहौल, आदि शामिल हैं।

इसके मूल में यह बात कही जा सकती है कि हमारी शिक्षा प्रणाली अभी भी परीक्षा-केन्द्रित और अंक-आधारित है। इसमें पुस्तकालय, खेलकूद, कला जैसे विषय हाशिए पर ही संघर्ष करते रहते हैं। इसके साथ, यह भी सवाल रहा है कि हिन्दी पट्टी में पढ़ने की संस्कृति की कोई विरासत ही नहीं रही है, जिसमें किताबों को पढ़ना-गुनना अपनी जगह बना सके। इस कारण भी स्कूलों या समुदाय में पुस्तकालय का महत्त्व स्थापित नहीं हो पाया। इस परिदृश्य में, ऐसा महसूस होता है कि स्कूलों में बच्चों के बीच पढ़ने की आदत को बनाना है, तब उसके समानान्तर शिक्षकों के बीच भी पढ़ने की संस्कृति को विकसित करने का प्रयास करना होगा। इस माहौल को बनाने में शिक्षकों के साथ शिक्षा व्यवस्था को भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी, और शिक्षक पेशेवर विकास में शिक्षकों के पढ़ने-लिखने व सोच-विचार को केन्द्र में लाना होगा। यह कार्य केवल शिक्षक प्रशिक्षण को पूरा कर देनेभर से ही नहीं होगा। स्थानीय स्तर पर ही शिक्षकों के साथ कुछ छोटी पगडण्डियाँ बनानी होंगी और दीर्घकालिक दृष्टिकोण के तहत काम करना होगा।

यह ध्यान रखना होगा कि शिक्षा का काम ऐसा नहीं है, जो केवल प्रशिक्षण आयोजित कर देने से ही पूरा हो जाता है। इसके लिए व्यवस्था में अभिप्रेरणात्मक माहौल बनाने की ज़रूरत पड़ती है। इसमें किताबों को पढ़ने के साथ गुनने की भी ज़रूरत होती है, जिसमें किताबों पर, शैक्षिक मुद्दों पर चर्चा, पुस्तक मेला, लेखकों से बातचीत, आदि क्रियाकलाप शामिल किए जा सकते हैं। इस आलेख में आगे कुछ ऐसे ही अनुभवों को साझा करने का प्रयास किया गया है।

स्कूली शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य में पुस्तकालय के सम्बन्ध में हम दो स्तरों पर ध्यान देते हुए विचार कर सकते हैं। पहला, प्राथमिक विद्यालयों में पुस्तकालय, व दूसरा, छठवीं से बारहवीं तक के विद्यालयों में पुस्तकालय। फ़ील्ड में काम करते हुए यह समझने को मिला कि प्राथमिक स्तर के शिक्षकों से सर्व शिक्षा अभियान (वर्तमान में समग्र शिक्षा अभियान) द्वारा आयोजित विभिन्न शिक्षक प्रशिक्षणों या अन्य संस्थाओं के शिक्षक प्रशिक्षणों के माध्यम से स्कूल पुस्तकालय, रीडिंग कार्नर, बाल साहित्य, आदि मुद्दों पर निरन्तर बातचीत होती रही है। वर्तमान में शिक्षा व्यवस्था द्वारा भी प्रति वर्ष स्कूलों को किताबें उपलब्ध करवाई जा रही हैं। बाल साहित्य व स्कूल पुस्तकालय का मुद्दा शिक्षकों व शिक्षा व्यवस्था के बीच चर्चा में रहा है। इसके साथ ही, इस दिशा में कुछ संस्थाएँ भी सक्रिय रही हैं। इन संस्थाओं ने स्कूलों में पुस्तकालय स्थापित करने में सहयोग प्रदान किया है। इस काम में एनसीईआरटी की रीडिंग सेल की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है। उनके द्वारा प्रकाशित सामग्री में रीडिंग कार्नर, पुस्तकालय, आदि की चर्चा भी की गई है। इन सभी संस्थाओं द्वारा स्कूल पुस्तकालय, बाल साहित्य, कक्षा में किताबों के उपयोग, आदि पर प्रशिक्षण भी आयोजित किए गए हैं। इन प्रयासों को कुछ जगह फलीभूत होते हुए भी देखा जा सकता है।

आज से लगभग पाँच-सात साल पहले विद्यालय के प्रधानाध्यापक व शिक्षकों में ये चिन्ता व्याप्त थी कि यदि स्कूल को दी गई किताबें फट जाएँगी, तब इनका हिसाब कौन देगा। इस कारण ये किताबें अलमारी में ही बन्द रहती थीं।

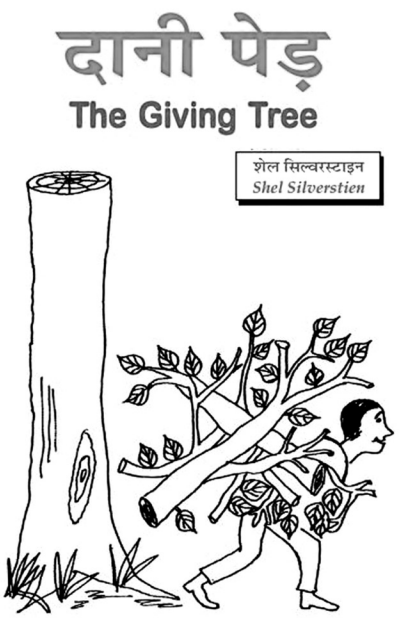

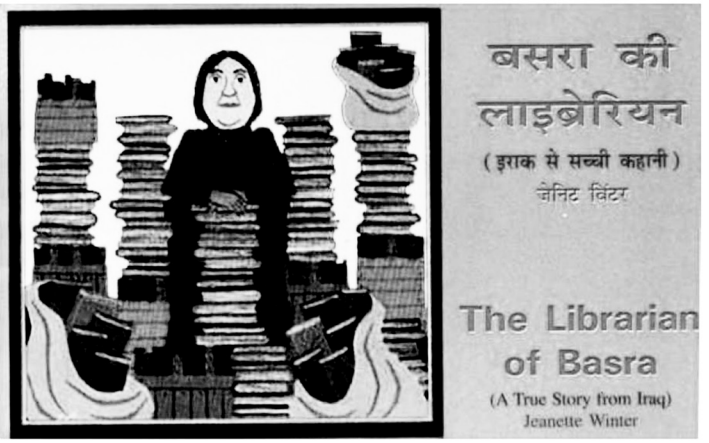

शिक्षकों से यह भी सुनने को मिलता था कि पहले बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तकें ही पढ़ लें वही बहुत हैं, या ये किताबें तो प्राइवेट स्कूल के बच्चों के लिए हैं, इन बच्चों के मतलब की नहीं हैं। वर्तमान में शिक्षकों के साथ होने वाली बातचीत में ये बातें नहीं उभरतीं। अब वे स्वीकारते हैं कि ये किताबें बच्चों को पढ़ने के लिए देनी चाहिए, और कई जगह इनका लेन-देन व उपयोग भी दिखाई पड़ता है। इन किताबों के अच्छे उपयोग के उदाहरण शिक्षकों के बीच से उभरे हैं, लेकिन अभी यह नहीं कहा जा सकता कि ज़्यादातर स्कूलों में इनका प्रभावी इस्तेमाल हो रहा है। हाँ, कुछ-कुछ विद्यालयों में ये होता ज़रूर दिख जाएगा। इनके उपयोग के भी अलग-अलग स्तर हैं। कुछ स्कूलों में केवल किताबों का लेन-देन ही होता है। बच्चे ख़ुद ही किताबें पढ़ लेते हैं। कुछ स्कूलों में शिक्षक बाल साहित्य की अच्छी समझ रखते हैं। वे किताबों पर बच्चों से बातचीत भी करते हैं और उन्हें पढ़कर बच्चों को सुनाते भी हैं। बच्चे किताबें घर पर भी पढ़ने के लिए ले जाते हैं। इससे बच्चे भी कहानियाँ-कविताएँ बनाते हैं, और उनमें पढ़ने का रुझान भी बनता है। फ़ील्ड में ऐसे उदाहरण भी देखने को मिले, जहाँ बच्चे अपने स्तर से मोटी किताबें पढ़ने का प्रयास और उनपर बातचीत करते हैं।

यह भी देखने को मिला कि जब बच्चे छठवीं कक्षा में पहुँचते हैं, उन्हें किताबें उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। तब कुछ बच्चे इन किताबों को पढ़ने के लिए अपने पुराने प्राथमिक विद्यालयों का भी रुख़ करते हैं। आगे की कक्षाओं में विषय भी अधिक होते हैं और कोर्स भी हावी रहता है। कई विद्यालयों में पर्याप्त शिक्षक भी नहीं होते। इसके अलावा, इन विद्यालयों में शिक्षकों के साथ पुस्तकालय के महत्त्व व उपयोग के बारे में कोई शिक्षक प्रशिक्षण या बातचीत भी नहीं होती है। साथ ही, शिक्षकों की बातचीत में शिक्षण के अलावा और सूचनाओं के संकलन जैसे मुद्दे भी उभरकर आते हैं। वे इन्हीं को पूरा करने में व्यस्त रहते हैं। उनको और कुछ सोचने का समय भी नहीं मिल पाता। यही परिदृश्य

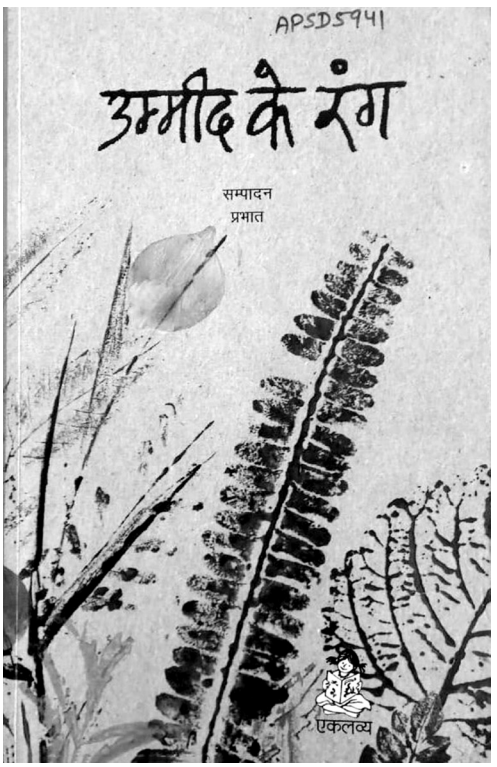

बारहवीं तक की कक्षाओं में दिखाई पड़ता है। हालाँकि, इन विद्यालयों में किताबें सरकार उपलब्ध कराती है, पर ये बच्चों के बीच नहीं पहुँच पातीं। शिक्षकों के बीच काम करते हुए यह बात भी समझ में आती है कि ज़्यादातर शिक्षकों में ही पढ़ने के प्रति कोई रुझान नहीं है। इस कारण से भी इन किताबों का महत्त्व शिथिल पड़ जाता है। कहीं-कहीं कुछ शिक्षकों की स्वयं की प्रेरणा से छिटपुट स्कूलों में इनका उपयोग दिखाई भी पड़ता है। वे ऐसे शिक्षक होते हैं जिनकी ख़ुद की भी पढ़ने में रुचि होती है। इससे यह बात समझ में आती है कि बच्चों के बीच पुस्तकों के प्रति दिलचस्पी बनाने के प्रयास तो होने ही चाहिए। वर्तमान समय में शिक्षकों में पढ़ने की संस्कृति विकसित करने के लिए सघन प्रयास की ज़रूरत है। इसका कारण यह भी समझ में आता है कि अधिकतर शिक्षक प्रशिक्षण गतिविधि व टीएलएम आधारित हो गए हैं। उनमें सोचने-पढ़ने, सार्थक चर्चा, आदि बहुत ज़ोर नहीं दिया जाता है। ये प्रशिक्षण ढर्रे पर ही चलते हुए दिखाई देते हैं।

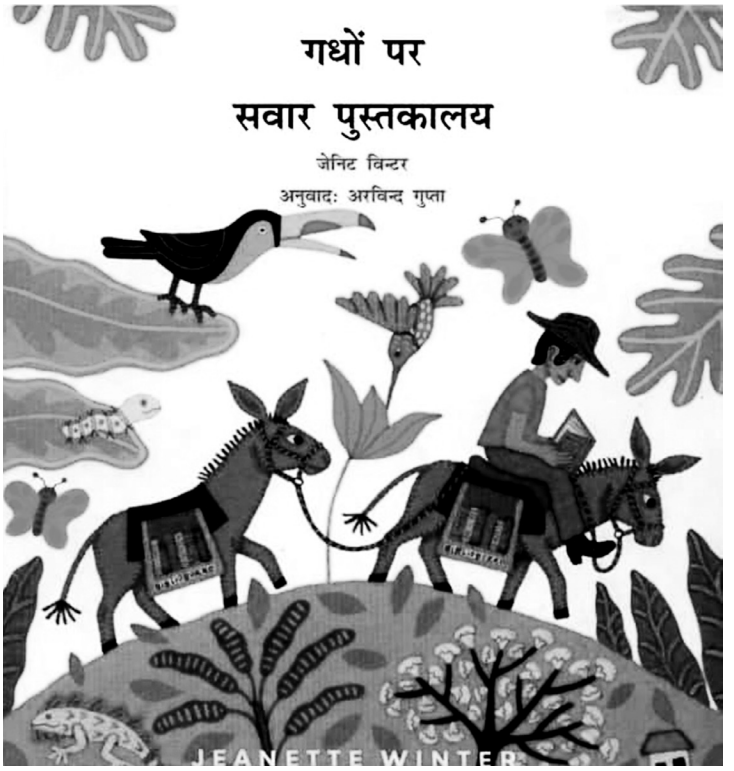

स्कूल में पुस्तकालय व बाल साहित्य पर शिक्षकों के साथ बातचीत होती रही है। कोविड महामारी के दौरान शिक्षकों को विभिन्न तरह की पाठ्य सामग्री का एक्सपोज़र देने और पढ़ने का रुझान बनाने के लिए एक व्हाट्सएप समूह के माध्यम से ज़िले में कुछ शिक्षकों के साथ छोटा-सा प्रयास शुरू किया गया। समूह में शिक्षकों को विविध तरह की छोटी-छोटी सामग्री पढ़ने के लिए भेजी गई और उन्हें पढ़ने के लिए अवसर उपलब्ध कराए गए। इसके तहत कहानी-कविताओं के अलावा शिक्षा व विषय के नज़रिए, कक्षा के अनुभवों से जुड़ी सामग्री, विविध तरह का बाल साहित्य, आसपास के पर्यावरण से जुड़ी सामग्री, आदि उन्हें पढ़ने के लिए भेजी की गई। इसके साथ-साथ उन्हें भारत ज्ञान विज्ञान समिति की कुछ छोटी-छोटी किताबें भी पढ़ने को भेजी गईं। इनमें *सडाको और काग़ज़ के पक्षी, दानी पेड़, गधों पर सवार पुस्तकालय, बसरा की लाइब्रेरियन, नन्हे आर्थर का सूरज, नीलबाग के डेविड, जिसने उम्मीद के बीज बोए, आँखों की चमक* आदि किताबें शिक्षकों ने पसन्द कीं। इस प्रक्रिया में कुछ अन्य किताबों को भी शिक्षकों ने पसन्द किया। इनमें *दिवास्वप्न, तोत्तो-चान, बच्चे की भाषा और अध्यापक, पढ़ना, ज़रा सोचना, पहला अध्यापक, राज समाज और शिक्षा, श्रम की गरिमा, उम्मीद के रंग, डेविड ऑसबर्ॉ और नीलबाग स्कूल,* आदि का नाम लिया जा सकता है। इस प्रक्रिया में शिक्षकों को यह लगा कि इस तरह की सामग्री, कहानी, कविताएँ हमने कभी

नहीं पढ़ीं। उन्हें यह एहसास हुआ कि विभिन्न विषयों से जुड़ी पठन सामग्री सहज भाषा में हो सकती है। इसके साथ, उन्हें इस सामग्री पर केन्द्रित साप्ताहिक चर्चाओं में यह महसूस हुआ कि पढ़ने के मायने क्या हैं; यह सामग्री हमारे नज़रिए व शिक्षण से कैसे जुड़ती है; और सामग्री को किस नज़रिए से पढ़ा जाए? कुछ शिक्षकों ने यह कहा कि इस दौरान जितनी चीज़ें उन्होंने पढ़ीं उतनी पहले कभी नहीं पढ़ीं। यह भी देखने को मिला कि कुछ शिक्षकों ने अपने पढ़ने के लिए किताबें ख़रीदीं और घर पर अपने लिए पुस्तकालय बनाने के प्रयास किए। इसी क्रम में, आगे ऑनलाइन माध्यम से समय-समय पर कविता, कहानी व बाल साहित्य की अन्य पुस्तकों पर समझ बनाने के प्रयास किए गए। बाल साहित्य में *पहाड़ जिसे चिड़िया से प्यार हुआ* किताब ने शिक्षकों पर गहरी छाप छोड़ी। इस तरह अन्य किताबें पढ़ी गईं और उनपर चर्चा की गई। अभी भी यह सिलसिला गर्मी व सर्दियों की छुट्टियों में चलता रहता है। इसके माध्यम से शिक्षकों में पढ़ने का रुझान विकसित करने का प्रयास किया जाता है।

पत्तियाँ पानी बाहर फेंकती हैं

अलका तिवारी

राजस्थान के टोंक ज़िले में चल रहे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के स्कूल में कक्षा-4 के बच्चों के साथ पर्यावरण अध्ययन पर जारी कार्य का अवलोकन मैं यहाँ पर साझा कर रही हूँ। इस स्कूल में टोंक ज़िले के बम्बोर गाँव के वंचित वर्ग के बच्चे आते हैं।

लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार

नंदा शर्मा

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर शिक्षकों के साथ ही पढ़ने की आदत के विकास पर एक औपचारिक कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला में शिक्षकों को विविध तरह की सामग्री से परिचित करवाया गया, और उसपर कुछ सवालों के माध्यम से चर्चा की गई। शिक्षकों के साथ बातचीत में यह समझ में आ रहा था कि सामग्री को पढ़ने का उनका नज़रिया बहुत अलग था। कहानी-कविताओं को वे जानकारियों या मूल्यों की दृष्टि से ही देख पा रहे थे। शैक्षिक नज़रिए से जुड़े आलेखों में उन्हें 'वे स्कूल क्यों आते हैं', 'मेरी शिक्षण यात्रा', 'गतिविधियों का मायाजाल', आदि आलेख काफ़ी पसन्द आए। यह समझने को मिला कि शिक्षकों के जीवन व उनके शिक्षण

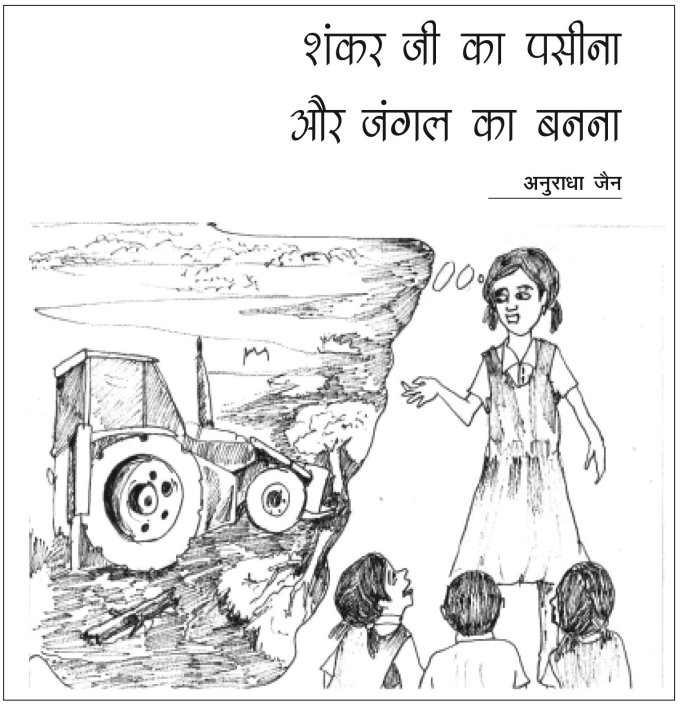

अनुभवों से जुड़े आलेख शिक्षक बहुत पसन्द करते हैं। कक्षा के अनुभवों पर आधारित सामग्री, जैसे– 'पत्तियाँ पानी फेंकती हैं', 'लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार', 'शंकरजी का पसीना और जंगल का बनना', 'व्याकरण की घण्टी', आदि, को पढ़कर वे यह समझ पा रहे थे कि शिक्षिका ने केवल कोर्स पूरा कराने का काम नहीं किया है, बल्कि वे कक्षा में समझ बनाने के उद्देश्य से काम कर रही हैं। इस कार्यशाला के फ़ीडबैक में शिक्षकों के बीच से यह बातें सामने आईं, "इस कार्यशाला से हमें इस बात का एहसास हुआ कि हमें सामग्री को कैसे पढ़ना चाहिए। हमें अपने पढ़ने के उद्देश्यों पर ध्यान देने और उसके नज़रिए को समझने के साथ उसकी भाषा व संरचना पर ध्यान देने की ज़रूरत है। पहले हम कुछ-कुछ पढ़ते तो थे, लेकिन सामग्री को ऐसे नहीं देखते थे। जिस तरह के सवालों पर यहाँ बात हो रही थी, उनपर हमने कभी ध्यान नहीं दिया था, यह समझ हमें यहाँ मिली है। किताबें या कोई और सामग्री पढ़ने के साथ-साथ उनपर आपस में बातचीत भी ज़रूरी है। इसके लिए सतत प्रयास की ज़रूरत है। इसकी पहल हमें अपने ब्लॉक / संकुल स्तर पर रीडिंग सर्किल बनाकर करने की ज़रूरत है। जब हम ख़ुद किताबों को पढ़ने में रुचि लेंगे, तभी बच्चों के साथ भी किताबों का बेहतर उपयोग कर पाएँगे।"

कुल मिलाकर, शिक्षकों के साथ इस तरह के प्रयासों में यह महसूस हुआ कि अगर पढ़ने की आदत स्कूल-कॉलेज के दिनों में न बन पाए, इसे आगे विकसित करना बहुत मुश्किल होता है। यह लगातार प्रयास से ही सफल हो सकता है। बहुत-से शिक्षक एक छोटे-से आलेख से भी जुड़ाव बनाने में मुश्किल महसूस करते हैं। शिक्षकों के साथ इस प्रक्रिया में यह अनुभव ज़रूर हासिल हुआ कि इस तरह के छोटे-छोटे प्रयास शिक्षकों के बीच किए जाने की ज़रूरत है। इसमें हम उनकी मदद कर सकते हैं। अगर इसमें शिक्षक भी अपने स्तर पर स्वैच्छिक रूप से पहल करें, इस काम में गति आ सकती है। शिक्षक पढ़ने से जुड़ेंगे, पुस्तकों का आनन्द लेंगे, तब निश्चित रूप से वे बच्चों के लिए पुस्तकालय को सक्रिय करने का प्रयास और उनके लिए पढ़ने का माहौल सृजित करेंगे।

कमलेश चंद्र जोशी प्राथमिक शिक्षा से लम्बे समय से जुड़े हुए हैं। प्राथमिक शिक्षा से जुड़े विभिन्न विषयों– शिक्षक शिक्षा, बाल साहित्य, प्रारम्भिक भाषा एवं साक्षरता आदि में गहरी रुचि। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर में कार्यरत।

सम्पर्क : kamlesh@azimpremjifoundation.org